THE ECONOMIC TIMES

Date: 04-05-18

Smartening Up GoI with AI

Applying AI in governance will let India leapfrog many developmental, infrastructural constraints

Ravi Shankar Prasad, (Minister, Electronics & Information Technology, GoI)

There are many strategic, industrial and societal areas where artificial intelligence (AI) techniques are increasingly being applied, such as in security, finance, manufacturing, e-commerce, voice recognition and transportation. The application of AI in governance provides an opportunity for India to apply information and communications technology (ICT) tools and leapfrog developmental and infrastructural constraints.

Large data sets and better analytic tools allow for better design of policies. For example, once we can map in detail all the court litigations in India, it can be a relatively easy exercise to identify which laws — and which specific sections within those particular laws — are generating larger amounts of litigation. We can then look at rectifying the law itself (or modify its application) to reduce the amount of litigation, reducing the burden on our judicial system.

This example is not a figment of imagination. The National Judicial Data Grid (NJDG) is already producing data providing new insights.

Loo-king Down the Drain

AI systems can also be used in monitoring of developmental projects. The National Informatics Centre (NIC) has developed a pilot project to monitor the implementation of the toilet construction programme under the Swachh Bharat Abhiyan by analysing photographs taken with GPS-enabled smartphones. The AI software is able detect the location, the identity of the beneficiary through face-recognition technology, and the physical state of the toilet using an algorithm that infers its condition from the pictures.

From thousands of photos, it can weed out duplicates, out-of-bounds entries, and improper construction or usage in a matter of seconds. Thereby, it quickly identifies genuine cases that need to be reimbursed. This task would ordinarily take humans hundreds of hours and be prone to human errors. Other governance tasks AI can find uses for range from predictive maintenance of public infrastructure and disaster response, to preventive healthcare and financial fraud prevention. Use of AI systems in the agriculture sector can help our farmers maximise farm productivity and yields by using all available data relating to weather, soil conditions, groundwater, cropping patterns and providing practical inputs about what to grow, when to grow, when to fertilise, irrigate and harvest.

AI tools like face recognition can be used to track known criminals using the data from ever-growing number of CCTV cameras. These tools, of course, will need to be balanced against the individual's right to privacy, which the Supreme Court has ruled to be a fundamental right. The fear that AI may lead to loss of jobs is often expressed. But AI doesn't replace humans. It only enhances their capacity to do a job. It can

take care of repetitive and unimaginative tasks, allowing the human mind to be applied to more creative pursuits. As it grows, the AI field will itself create many more job opportunities.

GoI appreciates that successful development of AI is dependent on the availability of good data. Given the concerns of data protection and privacy, a committee headed by retired Justice B N Srikrishna will create a comprehensive data-protection and data-usage framework for India. To keep the innovation mills going, the concerns of data privacy and data security need to be balanced against requirements of data availability, data anonymity and data innovation.

Dancing to the Algorhythm

It will also become increasingly important to develop AI algorithms that are not just powerful and scalable but also transparent to inspection. They must be robust against manipulation. Responsibility, auditability, incorruptibility, predictability — all criteria that apply to humans performing governance functions would also be a factor in any AI algorithm to augment human judgement.

A new legal framework to deal with the intersection of the AI and human spheres and AI application also need to be created. The ministry of electronics and information technology's Centre for Development of Advanced Computing (C-Dac) in Pune has been working on AI technologies, especially natural language processing, for some time. It has developed a strategic plan for application of AI in different sectors.

This January, a workshop with many leading experts from academia and industry discussed the way forward for creating an ecosystem for AI development in India. Four separate committees will be promoting AI initiatives and developing a policy framework. These committees will soon propose action plans in the areas of platform and data for AI; leveraging AI for identifying a national mission in key sectors; mapping technological capabilities and policy enablers required across sectors, skilling and re-skilling, and R&D; and cyber security, safety, legal and ethical issues. The report will set the tone of AI development and deployment in India.

दैनिक भास्कर

Date: 04-05-18

रोजगार की गंभीर चुनौती मांग रही है तगड़ा जवाब

छोटे-मध्यम उद्योगों के फाइनेंस की दिक्कतें दूर करने और निजी निवेश पुनर्जीवित करने से निकलेगी राह।

मंटेकसिंह आहलूवालिया, (योजना आयोग के पूर्व उपाध्यक्ष)

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी 1 करोड़ लोगों को रोजगार देने के वादे पर 2014 का चुनाव जीते थे। समस्या यह है कि रोजगार के भरोसेमंद आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। सालों से हम नेशनल सैम्पल सर्वे ऑर्गनाइजेशन (एनएसएसओ) द्वारा हर पांच वर्ष में कराए गए रोजगार सर्वे पर निर्भर रहे हैं। पिछला सर्वे 2011-12 में किया गया था और अगला अभी चल रहा है। नतीजे सितंबर 2019 तक आ पाएंगे। एनएसएसओ ने अब रोजगार पर सालाना सर्वे करने का निर्णय लिया है। ऐसा हुआ तो 2024 के आम चुनाव तक रोजगार पर सालाना स्कोर कार्ड तैयार होगा। लेकिन, अभी तो रोजगार पर कोई भरोसेमंद जानकारी नहीं है।

सच तो यह है कि रोजगार की समस्या का ध्यान नौकरियों की संख्या के अभाव के साथ-साथ अच्छी गुणवत्ता की नौकरियों के अभाव पर केंद्रित होना चाहिए। बहुत से मौजूदा जॉब काम चाहने वालों की आकाक्षांओं के अनुरूप नहीं होते। एनएसएसओ सर्वे बताता है कि जब किसानों से पूछा गया, तो लगभग 50 प्रतिशत किसानों ने उत्तर दिया कि वे खेती छोड़ना चाहते हैं। 'असंगठित क्षेत्र' में भी कई कम भुगतान और कम कौशल वाले जॉब हैं। ऐसे जॉब तब मंजूर थे जब गरीबी अधिक थी और लोग हर काम करने को तैयार रहते थे। अब परिवार की आमदनी बढ़ने के साथ, लोगों की हसरतें भी बढ़ गई हैं। वे बेहतर गुणवत्ता के जॉब चाहते हैं। यही वास्तविक चुनौती है : हम उस प्रकार के पर्याप्त जॉब कैसे पैदा करें, जो लोग अब चाहते हैं। आमतौर पर सुनने में आता है कि चपरासी या सफाई कर्मचारी जैसी निचली श्रेणी के सरकारी जॉब के लिए लाखों आवेदन प्राप्त होते हैं। इसका यह मतलब नहीं कि आवेदन देने वाले सारे ही बेरोजगार थे। बहुत बड़ी संख्या ऐसे लोगों की होगी, जो अनौपचारिक क्षेत्र में जॉब कर रहे होंगे। सार्वजनिक क्षेत्र के जॉब में बाजार दर से अधिक भुगतान होता है और वे अन्य फायदे व जॉब सुरक्षा भी देते हैं इसलिए निजी अनौपचारिक क्षेत्र में ऐसे जॉब कर रहे लोग भी सरकारी जॉब के लिए जब और जहां भी भर्ती होती है, तत्काल आवेदन कर देते हैं।

चूंकि रोजगार पर बहस तेज हो रही है और राजनीतिक दल अधिक रोजगार पैदा करने के वादे कर रहे हैं तो इस विषय पर कुछ खास मुद्दों पर नज़र रखने की जरूरत है। 2011-12 में किसानों की गिनती 15.1 करोड़ थी। इसमें मजदूर किसान तो शामिल नहीं लेकिन, जो किसान खुद को स्वरोजगार में लगा बताते हैं, वे शामिल हैं। यह स्पष्ट है कि वे अपने स्वरोजगार से संतुष्ट नहीं हैं। वर्तमान में हमारे देश में 50 करोड़ लोगों की श्रमशक्ति है। यदि देश की जनसंख्या 1.3 फीसदी सालाना बढ़ती है और हम मानें कि श्रमशक्ति भी इसी दर से बढ़ेगी, तो हर साल 65 लाख लोग हमारी श्रमशक्ति में जुड़ेंगे, जिनके लिए भी रोजगार का प्रावधान करना होगा। श्रमशक्ति में महिलाओं की भागीदारी भी बढ़ानी होगी। इस दृष्टि से भी रोजगार में इजाफा करना होगा। खेती में रोजगार घट रहा है और यह घटना भी चाहिए। जो खेती छोड़ रहे हैं उनके लिए भी गैर-कृषि क्षेत्र में जॉब खोजने होंगे। पर्याप्त रोजगार पैदा करने के लिए जीडीपी दर को 8 फीसदी से ऊपर ले जाना संभवत: सबसे महत्वपूर्ण साधन है। इसे साकार करने के लिए व्यापक नीतियों में सुधार आवश्यक है, जो रोजगार रणनीति की बुनियाद बन सके।

पूर्वी एशिया के देशों में जॉब निर्मित करने का मुख्य स्रोत था मैन्यूफैक्चरिंग। इन देशों ने तेजी से बढ़ते हुए विश्व बाजारों में निर्यात को ध्यान में रखकर अधिक वृद्धि की रणनीति तय की। इससे श्रम केंद्रित मैन्यूफैक्चरिंग का ऊंची दर पर बढ़ना संभव हुआ। हमने वह मौका गंवा दिया। आज टेक्नोलॉजी की शक्तियां सारी मैन्यूफैक्चरिंग को ऑटोमेशन की ओर धकेल रही हैं। पुराने रोजगार को कहीं धक्का लगता है, तो नए रोजगार के अवसर खुल जाते हैं। यदि हम ऑटोमेशन के

वैश्विक चलन का विरोध करेंगे तो प्रतिस्पर्धा की क्षमता खो सकते हैं। हमें यह समझना होगा कि मैन्यूफैक्चरिंग और मेक इन इंडिया में रोजगार वृद्धि के बड़े स्रोत बनने की संभावना नहीं है।

हमें अपनी नीतियों से श्रम विरोध को बढ़ावा देने वाला पक्षपात दूर करना होगा, जिसके कारण भारतीय निवेशक अधिक पूंजीगत तरीकों की ओर जाता है। वित्त मंत्री श्री अरुण जेटली ने कॉर्पोरेट मुनाफे संबंधी टैक्स दर को 25 फीसदी तक नीचे लाने और पूंजीगत उद्योगों का पक्ष लेने वाले प्रोत्साहनों को खत्म करने का वादा किया था पर इसे अभी तक पूरी तरह लागू नहीं किया गया है। साथ ही श्रम कानूनों में लचीलापन लाना भी बहुत आवश्यक है। कुछ राज्यों ने चंद कदम उठाए हैं लेकिन, जो किया गया है वह पर्याप्त नहीं। सेवा क्षेत्र मैन्यूफैक्चरिंग की तुलना में दोगुना रोजगार देता है और इसी क्षेत्र में गैर-कृषि रोजगार में ज्यादातर वृद्धि होगी। इसमें शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं से लेकर व्यापक व्यावसायिक सेवाएं शामिल हैं। अर्थव्यवस्था को औपचारिक बनाने से नौकरियों की गुणवत्ता में सुधार आएगा और कर संग्रहण भी बढ़ेगा। औपचारीकरण को प्रोत्साहन देना चाहिए पर नकदी का कृत्रिम अभाव पैदा करके नहीं। इसे स्वस्फूर्त ढंग से बढ़ावा देने के लिए प्रोत्साहन व टैक्स सुधार बेहतर होगा। जब औपचारीकरण आगे बढ़ेगा तो अनौपचारिक क्षेत्र की इकाइयों में कुछ उथल-पुथल मचाने वाले बदलाव होंगे, क्योंकि कर व पर्यावरण संबंधी खामियों का लाभ उठाकर फली-फूली ये इकाइयां बिज़नेस से बाहर हो जाएंगी। यदि बदलाव क्रमिक हुआ तो इससे निपटा जा सकता है। कौशल विकास रोजगार पैदा करने की किसी भी रणनीति का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है लेकिन, चुनौती यह है कि जो कौशल दिया जा रहा है वह वाकई रोजगार की योग्यता बढ़ाए। हाल ही में सरकार द्वारा की गई कुछ पहल इन अपेक्षाओं पर पूरी नहीं उतरतीं।

आखिर में, सारे ही देशों में छोटे और मध्यम दर्जे के रोजगार प्रदाता सबसे अधिक रोजगार देते हैं। यह समूह प्राय: शिकायत करता है कि उसे पर्याप्त बैंक क्रेडिट नहीं मिलता। स्टार्टअप को खासतौर पर कठिनाई होती है। बैंकिंग सिस्टम इस वक्त अपनी ही समस्याओं के बोझ तले दबा है, जिनका समाधान करना वृद्धि को गति देने और रोजगार पैदा करने, दोनों दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। निजी निवेश को पुनर्जीवित करना होगा। यह अभी बाकी है। सरकार को देखना चाहिए कि कौन-सी बाधाएं निवेशकों को निवेश करने से रोक रही हैं। यह अंतत: भरोसा और आपसी विश्वास निर्मित करने का मामला है। निवेश को पुनर्जीवित करने वाला मोड़ रोजगार निर्मित करने में सर्वोत्तम भूमिका निभाएगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 04-05-18

छलना साबित हो सकता है मीडिया में सच तलाशना

क्या आज के सूचना युग में दुनिया में विश्वसनीयता और निजता का एक नया मानक तैयार हो रहा है? इससे संबद्ध तमाम बातों की विवेचना कर रहे हैं

अजित बालकृष्णन

वेब उद्योग के खिलाफ इन दिनों जमकर आरोप लगाए जा रहे हैं। इस क्षेत्र के चंद लोगों ने आम नागरिकों के निजी डेटा का दुरुपयोग करके अपने लिए समृद्धि हासिल की है और यह बात इन दिनों चर्चा में है। हर रोज कोई न कोई नई बात

सामने आ रही है। हर रोज नए खुलासे हो रहे हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो सूचना युग अपने साथ मनुष्यता के सबसे निकृष्ट चिह्न भी ले आया है। उदाहरण के लिए मैसाच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलजी (एमआईटी) की मीडिया लैब की रिपोर्ट की बात करते हैं जो एक विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। रिपोर्ट में कहा गया है कि इंटरनेट पर झूठ सच की तुलना में कहीं अधिक तेजी से प्रसारित होता है। एमआईटी की मीडिया लैब ने वर्ष 2006 से 2017 के बीच करीब 30 लाख लोगों द्वारा 45 लाख बार ट्वीट की गई 126,000 खबरों की जांच की। उन्होंने इन्हें स्पष्ट झूठ या स्पष्ट सच के रूप में वर्गीकृत किया। वे इस नतीजे पर पहुंचे कि झूठी खबरें कहीं अधिक व्यापकता, तेजी और गहराई से प्रसारित होती हैं। उन्होंने यह निष्कर्ष दिया कि ऐसा शायद इसलिए होता होगा क्योंकि झूठी खबरें सच्ची खबरों की तुलना में कहीं अधिक नवीनता लिए होती हैं। उनको फैलाने के काम में भी रोबोट की तुलना में मनुष्य अधिक सक्रियता से लगे होते हैं। हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू के अध्ययन में कहा गया है कि सोशल मीडिया लोगों के उपयोगी गतिविधियों में लगने वाले समय में कटौती कर रहा है। वह उनमें सुस्त व्यवहार को बढ़ावा दे रहा है और साथ ही वह प्रतिकूल सामाजिक तुलनाओं के साथ उनके आत्म सम्मान को भी छीन सकता है।

वे इस बात को रेखांकित करते हैं कि कुछ शंकालुओं ने कहा था कि शायद कम बेहतरी वाले लोगों के सोशल मीडिया के इस्तेमाल की संभावना ज्यादा होती है। यह कहना ठीक नहीं होगा कि सोशल मीडिया की वजह से लोगों में गिरावट आ रही है। उनके अध्ययन में अमेरिका के 5,308 लोगों के आंकड़े शामिल किए गए और उनका कहना है कि उन्होंने अपने अध्ययन में निरंतर यह पाया कि दूसरों की सामग्री को पसंद करना और लिंक पर क्लिक करना, इन दोनों के चलते शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य और जीवन संबंधी संतुष्टिं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। एक खबर यह भी आ रही है कि अमेरिका का वीजा चाहने वालों से उनकी पिछले पांच साल की सोशल मीडिया संबंधी पूरी जानकारी जमा करने को कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में कहें तो आपके बारे में विश्वसनीय और पुख्ता जानकारी जुटाने के लिए सोशल मीडिया का सहारा लिया जा सकता है। क्या दुनिया में विश्वसनीयता और निजता का एक नया मानक तैयार हो रहा है? उदाहरण के लिए जब हम प्रख्यात अभिनेत्रियों या क्रिकेटरों को राष्ट्रीय स्तर के किसी चैनल या अखबार या फिर रेडियो में किसी साबुन का विज्ञापन करते देखते हैं तो हममें से कोई यह यकीन नहीं करता कि वह वास्तव में उसका इस्तेमाल करता होगा।

हमें पता होता है कि वे अपने नाम और अपनी तस्वीर का इस्तेमाल हमारे दिमाग में उस साबुन की सकारात्मक छवि गढ़ने के लिए कर रहे हैं। ताकि हम उसे उनके खूबसूरत व्यक्तित्व से जोड़ कर देखें। इन दिनों संभव है कि कोई ऐसी मांग भी कर दे कि केवल सच्चे विज्ञापन ही मीडिया में आने चाहिए और अगर पता चलता है कि विज्ञापन करने वाले उस ब्रांड का इस्तेमाल नहीं करते तो सजा का प्रावधान हो? इतिहास पर एक नजर डालना भी बेहतर होगा। जब सिनेमा, टेलीविजन और फिल्में पहली बार चर्चा में आए तो यह बात सुनने को मिली कि फिल्मों और टेलीविजन धारावाहिकों को लेकर लोगों में आदत पैदा हो जाएगी। यह तक कहा गया कि 25 वर्ष की उम्र के बाद टीवी देखने में बिताया गया हर घंटा व्यक्ति की जिंदगी 25 मिनट कम कर देता है। स्टीव कोवे जैसे मोटिवेशनल गुरुओं ने भी चेतावनी दी कि बहुत अधिक टीवी और सिनेमा देखना, खाली बैठे रहना या वीडियो गेम खेलना लोगों की क्षमताओं पर बुरा असर डालता है। इससे लोगों की प्रतिभा में निखार नहीं आता। एक समय जब प्रेम आख्यानात्मक उपन्यास लोकप्रिय थे तो कहा जाता था कि पोर्नोग्राफी की तरह उनकी भी लत लग सकती है। ये तमाम मुद्दे लंबे समय से हमारे साथ हैं। परंतु इंटरनेट के युग में इसकी गति बहुत तेज है। सच्ची-झूठी खबरें बहुत तेजी से फैलती हैं। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति बराक ओबामा ने हाल ही में कहा था कि गलत सूचना के प्रसार, षडयंत्र के सिद्घांतों, विपक्ष की नकारात्मक छवि बनाने आदि ने मतदाताओं का ध्रुवीकरण बहुत तेज कर दिया है।

सोशल मीडिया और इंटरनेट के ताकतवर होने से बहुत पहले सन 2000 में मैल्कम ग्लैडवेल ने लिख दिया था कि कैसे छोटी बातें बड़े बदलाव पैदा कर सकती हैं और कुछ विचार, और उत्पाद तथा संदेश और व्यवहार वायरस की तरह पनप सकते हैं। वह खासतौर पर सन 1990 के मध्य में हश पपीज के जूतों की लोकप्रियता और बिक्री में इजाफे और सन 1990 के दशक में न्यूयॉर्क शहर में अपराध की दर में आई तेज गिरावट का उदाहरण लेते हैं। वह इसके लिए तीन तरह के लोगों को उत्तरदायी ठहराते हैं। एक तो वे जो अन्य कई लोगों को जानते हों और उनको परिचय करने की आदत हो। दूसरा ऐसे लोग जिनमें विशेष सूचनाओं को एकत्रित करने की आदत हो और ऐसी सूचना को साझा करने में जिन्हें आनंद आता हो। तीसरे वे लोग हैं जिनमें दूसरों को प्रभावित करने की क्षमता हो। ग्लैडवेल का कहना है कि इन तीनों तरह के लोगों के मिलने से सूचनाओं और उत्पादों का विस्फोटक ढंग से प्रसार होता है।

इंटरनेट और ईमेल और इंस्टैंट मेसेंजर जैसी संचार सेवाओं के अचानक उभार के अलावा नेटवर्क प्रभाव नामक एक और कारक इसमें शामिल है। इसकी विस्तृत प्रक्रिया अभी सामने नहीं है। कहा जा रहा है कि औद्योगिक युग में जो महत्त्व आर्थिक पैमाने का था, वही सूचना युग में नेटवर्क प्रभाव का है। यानी उत्पादकता बढ़ाने की केंद्रीय प्रक्रिया।

Date: 04-05-18

दैनिक जागरण

नवप्रवर्तन के क्षेत्र में अमेरिका और भारत की महिलाओं का नेतृत्व

मैरीके लॉस कार्लसन, (लेखिका भारत में अमेरिका की उप-राजदूत हैं)

करीब पांच माह पहले प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की वरिष्ठ सलाहकार के रूप में इवांका ट्रंप ने दक्षिण भारत के प्रमुख शहर हैदराबाद में तीन दिवसीय वैश्विक उद्यमिता शिखर सम्मेलन में भागीदारी की थी। इस सम्मेलन का विषय था, 'वीमेन फस्र्ट, प्रॉस्पैरिटी फॉर ऑल।' भारत में पहली बार आयोजित इस सम्मलेन में दुनिया भर के प्रमुख अन्वेषकों ने भाग लिया था। जाहिर है कि इनमें बड़ी संख्या महिलाओं की थी।

यह सम्मेलन ऐसे समय पर हुआ जब भारत अपने मजबूत आर्थिक विकास, युवा जनसंख्या और दुनिया में बढ़ते प्रभाव के चलते दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींच रहा है। खास बात यह है कि भारत में भी बहुत सी महिलाएं नेतृत्व की भूमिका में हैं और उनके प्रभाव की झलक हैदराबाद में वैश्विक उद्यमिता शिखर सम्मेलन में भी दिखाई दी थी। इस सम्मेलन के बाद बीते सप्ताह 26 अप्रैल को पेटेंट, ट्रेडमार्क, कॉपीराइट्स और औद्योगिक डिजाइन के महत्व को चिन्हित करते हुए वल्र्ड इंटेलेक्चुअल (आइपी) प्रॉपर्टी दिवस मनाया गया। यह इस तरह का 18वां आयोजन था और इसका उद्देश्य नवप्रवर्तन और रचनात्मकता को बढ़ावा देना था। इस अवसर पर 'पावरिंग चेंज: वीमेन इन इनोवेशन एंड क्रिएटविटी' के संदेश पर जोर दिया गया।

आइपी डे के जरिये इस संदेश पर जोर दिया जाना यह रेखांकित करता है कि नवप्रवर्तन और रचनात्मकता के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका बढ़ी है और इस भूमिका को महत्व भी दिया जा रहा है। ऐसे आयोजन यही बताते हैं कि महिलाएं

विश्व की समस्याओं का समाधान कर रही हैं और प्रौद्योगिकी के माध्यम से दुनिया का कायाकल्प भी कर रही हैं। उदाहरण के लिए मुंबई के इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी की सुरभि श्रीवास्तव और पेंसिलवानिया स्टेट यूनिवर्सिटी की भारतीय मूल की अमेरिकी श्रद्धा सांगेलकर दुनिया भर के लाखों दृष्टिहीनों और दृष्टि-बाधित लोगों को डिजिटल ब्रेल डिस्प्ले को अधिक सस्ता और सुगम बनाने वाली प्रौद्योगिकी के माध्यम से डिजिटल इन्फॉर्मेशन एक्सेस प्रदान कर रही हैं। इसी तरह इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बेंगलुरु की नेहा सतक एक नए हाई-बैंडविथ वायरलेस सॉल्यूशन का विकास कर रही हैं।

यह आने वाले वर्षों में करोड़ों लोगों के लिए अधिक सुविधाजनक और किफायती हाई-स्पीड इंटरनेट एक्सेस के द्वार खोल सकता है। वस्तुत: सफलता की ऐसी कई कहानियां हैं। एक और उदाहरण देखें,मैसाच्यूसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के टिश स्कोलनिक दुनियाभर में विकलांग लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिए एक किफायती और सभी स्थानों पर चलने में सक्षम व्हीलचेयर बनाने के लिए एक भारतीय सहयोगी के साथ कार्य कर रही हैं। ये सभी महिलाएं दुनिया में परिवर्तन को गति एवं ऊर्जा प्रदान कर नवप्रवर्तन का प्रयोग कर रही हैं और साथ ही बौद्धिक संपदा की रचना भी कर रही हैं।

वे इस परिवर्तन को अमेरिका-भारत साइंस एंड टेक्नोलॉजी एंडोमेंट फंड यानी यूएसआइएसटीईएफ के साथ भागीदारी के द्वारा संभव बना रही हैं। यह भागीदारी दोनों सरकारों के बीच एक संयुक्त प्रयास है। यूएसआइएसटीईएफ संयुक्त रूप से विकसित, सामाजिक रूप से प्रासंगिक और उद्यमिता के लिए भारतीय और अमेरिकी नवप्रवर्तकों को 2.5 करोड़ रुपये (लगभग 375,000 अमेरिकी डॉलर) तक वित्तीय सहायता प्रदान करता है। भागीदार नवप्रवर्तन के लिए कार्यरत हैं और अपने कार्य की सुरक्षा के लिए अमेरिका और भारत में बौद्धिका संपदा सुरक्षा व्यवस्था पर भरोसा करते हैं। अमेरिका और भारत के पास नवप्रर्तन के क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं की और अधिक महत्वपूर्ण कहानियां हैं। हम सभी जानते हैं कि वर्षों से भारत में अमेरिका की सर्वाधिक नवप्रवर्तक कंपनियों की मजबूत उपस्थिति रही है। इसी प्रकार हम यह भी देख रहे हैं कि अधिक से अधिक भारतीय नवप्रवर्तक कंपनियां अमेरिका में निवेश कर रही हैं।

महिला नेतृत्वकर्ता जैसे आइबीएम की जिनी रोमेटी और पेप्सिको इंडिया की इंदिरा नूयी और जयपुर लिटरेचर फेस्टिवल की नमिता गोखले हमारे नवप्रवर्तन और रचनात्मक उद्योगों का नेतृत्व करने का अनुकरणीय और उल्लेखनीय उदाहरण हैं। चाहे यूएसआइएसटीईएफ हो या निजी उद्यम अथवा सरकारी या गैर सरकारी संगठन- इन सबने उद्यमिता का जोखिम उठाने और नवप्रवर्तन हेतु लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए बहुत कुछ किया है। हमें यह भरोसा है कि समावेशी अर्थव्यवस्था को बल प्रदान करने और नवप्रवर्तन को बढ़ावा देने के लिए अमेरिका एवं भारत, दोनों अभी और भी बहुत कुछ कर सकते हैं। इस सबके बीच हम इसकी भी अनदेखी नहीं कर सकते कि आज की वैश्विक अर्थव्यवस्था में नवप्रवर्तन और रचनात्मकता को विकसित करने और बनाए रखने के लिए हमें सक्षम और व्यापक बौद्धिक संपदा अधिकार कानूनों की जरूरत है। बेहतर बौद्धिक संपदा संरक्षण चाहे वह पेटेंट, ट्रेडमार्क, कॉपीराइट के तौर पर हों या ट्रेड सीक्रेट के रूप में-ये सब आर्थिक नवप्रवर्तन के साथ-साथ आर्थिक विकास को प्रेरित करेंगे। इसके अतिरिक्त वे समावेशी अर्थव्यवस्था में भी सहयोग करेंगे।

कार्यस्थल पर महिलाओं को या जो महिलाएं अपना कार्य खुद शुरू करना चाहती हैं, अभी बहुत कुछ प्राप्त करना है। वर्ल्ड इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार पिछले 20 सालों में पेटेंट प्राप्त करने वाली महिलाओं की संख्या दोगुनी हो गई है। आंकड़े बताते हैं कि जिन देशों में इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी यानी बौद्धिक संपदा अधिकार के सक्षम कानून हैं वहां

लैंगिक संतुलन को बेहतर करने में मदद मिली है। एक अन्य उत्साह प्रदान करने वाला आंकड़ा यह है कि आज दुनियाभर में पेटेंट के लिए आवेदन करने वालों में लगभग 29 प्रतिशत महिलाएं हैं, लेकिन हम केवल इतने से ही संतोष नहीं कर सकते और करना भी नहीं चाहिए। जब दुनिया भर में मनाए गए वल्र्ड इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी दिवस ने यह बताया कि महिलाएं नवप्रवर्तन के क्षेत्र में इतिहास रच रही हैं तब भारत और अमेरिका में रचनात्मकता के क्षेत्र में महिलाओं के उल्लेखनीय योगदान का स्वागत किया जाना चाहिए। इसी के साथ बौद्धिक संपदा संरक्षण के महत्व को भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

नईदुनिया

Date: 04-05-18

चीन से दोस्ती में चलें संभलकर

ब्रह्मा चेलानी, (लेखक सामरिक मामलों के विशेषज्ञ एवं सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च में फेलो हैं)

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग के बीच कुछ दिन पूर्व वुहान में हुए अनौपचारिक सम्मेलन को रिश्तों को नए सिरे से संवारने की कवायद के तौर पर देखा गया। इसमें दोनों देशों के नजरिए में तब अंतर नजर आया, जब उन्होंने सहमतियों की अपने-अपने हिसाब से व्याख्या की। जैसे भारत ने कहा कि दोनों नेताओं ने अपनी सेनाओं को 'रणनीतिक निर्देश दिए हैं ताकि सीमा पर तनाव और ज्यादा न बढ़े, लेकिन चीनी वक्तव्य में इसका कोई उल्लेख नहीं था। चीन के साथ व्यापार असंतुलन की मार झेल रहे भारत ने कहा कि दोनों देश व्यापार और निवेश को 'सतत एवं संतुलित रूप से आगे बढ़ाएंगे, मगर यह बात भी बीजिंग के रुख में शामिल नजर नहीं आई।

ऐसे मतभेदों पर कोई हैरानी नहीं है। असल में इस सम्मलेन में मेलजोल की भावना तो खूब दिखाई गई, लेकिन द्विपक्षीय संबंधों की दिशा में बुनियादी बदलाव लाने के लिहाज से ठोस फैसले नहीं हुए। चीनी राष्ट्रपति ने मजबूती के साथ प्रतीकों का मिश्रण करते हुए कूटनीतिक बिसात बिछाने पर अधिक ध्यान दिया, जिसमें लंबे लाल कालीन पर मोदी की अगवानी करना, भारतीय नेता को झील की सैर कराना और गर्मजोशी से हाथ मिलाने जैसी कवायदें शामिल रहीं। अगर मोदी के दौर में हिंदी-चीनी भाई-भाई के नारे की वापसी होती है, तो इसमें भारी राजनीतिक जोखिम होगा, क्योंकि यह मोदी की मजबूत नेता वाली छवि को नुकसान पहुंचा सकता है। चूंकि अब आम चुनावों में साल भर से भी कम का समय रह गया है, तो मोदी ने यह जोखिम लेने का फैसला किया।

असल में चीन से मधुर रिश्तों की पींगें बढ़ाने के पीछे मोदी का भी एक बड़ा दांव है, जिसमें वह विभिन्न् ताकतवर देशों के साथ संतुलन साधने की कोशिश में जुटे हैं। ऐसा इसलिए, क्योंकि उनकी अमेरिकापरस्त विदेश नीति भारत के लिए अभी तक फायदेमंद साबित नहीं हुई है। अंतरराष्ट्रीय संबंधों में ट्रंप के मोलभाव संबंधी दृष्टिकोण और संकीर्ण भू-राजनीतिक आकलन ने भारत पर अमेरिकी दबाव बढ़ा दिया है। इनमें 25 अरब डॉलर सालाना के व्यापार अधिशेष में कटौती, रूस और ईरान के साथ तल्ख संबंध और पाकिस्तान को आतंक का निर्यातक बताने के बावजूद उससे पूर्ण

राजनयिक संबंध बरकरार रखने जैसी बातें शामिल हैं। अमेरिका ने भारत को चेताया है कि उसके नए कानून के मुताबिक रूस पर लगे प्रतिबंधों के चलते भारत के रूस के साथ रक्षा अनुबंध भी प्रतिबंध के दायरे में आएंगे।

ईरान पर शिकंजा कसने की अमेरिकी रणनीति भी भारतीय हितों पर कुठाराघात करने वाली है, क्योंकि भारत वहां चाबहार बंदरगाह विकसित कर रहा है। चारों ओर भूमि से घिरे अफगानिस्तान और मध्य एशिया तक पहुंचने के लिहाज से यह भारत के लिए बेहद अहम परियोजना है। भारत का 150 अरब डॉलर का सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग भी ट्रंप की सख्त वीजा नीति की मार से कराह रहा है। नई दिल्ली को लगने लगा है कि अमेरिका जहां भारत को हल्के में ले रहा है, वहीं चीन को उसने खुली छूट दे रखी है जिसके चलते वह दक्षिण चीन सागर में कृत्रिम द्वीपों का भी आसानी से सैन्यीकरण कर रहा है। चीन के साथ डोकलाम के मुद्दे पर 73 दिनों तक चले सैन्य गतिरोध के दौरान ट्रंप प्रशासन ने एक बार भी भारत के पक्ष में बयान जारी नहीं किया, जबकि जापान ने सार्वजनिक रूप से भारत के रुख का समर्थन किया था।

अमेरिकी नीतियां भारत के सदाबहार दोस्त रूस को चीन के करीब ले जा रही हैं। रूस, उत्तर कोरिया और ईरान पर अपने रुख से चीन को फायदा पहुंचाते अमेरिका को देखते हुए यह जरूरी है कि भारत भी अपने पत्तों को फिर से फेंटे। एक पुरानी कहावत है, 'अपने मित्र को करीब रखो तथा अपने दुश्मन को और ज्यादा करीब। इसी के मद्देनजर मोदी भारत-चीन संबंधों को और बिगड़ने से रोकना चाहते हैं, क्योंकि संबंध बिगड़े तो विदेश नीति में भारत के लिए विकल्प भी कम हो जाएंगे। फिर गैरभरोसेमेंद ट्रंप प्रशासन पर निर्भरता में भी कोई भलाई नहीं। यहां तक कि जापान भी चीन से अपनी तल्खी को दूर कर रहा है। ऐसी स्थिति में भारत अलग रहना गवारा नहीं कर सकता। बहरहाल, मोदी के कदम का प्रशस्तिगान करने की जिनपिंग की अपनी रणनीतिक मजबूरियां हैं, जिनमें अमेरिका के साथ ट्रेड वॉर की आशंका भी एक वजह है। कुल मिलाकर बेहतर द्विपक्षीय संबंध बीजिंग को ज्यादा गुंजाइश देंगे। वैसे भी घनिष्ठता की संभावनाएं किसी भी सूरत में भरोसा जगाती हैं। आखिर इस दिशा में यह मोदी का दूसरा प्रयास जो है।

गौरतलब है कि प्रधानमंत्री मोदी ने चीन से संबंध सुधार की पहली कोशिश सत्ता संभालने के तुरंत बाद ही की थी जो चीन के शातिर रवैये के चलते फलीभूत नहीं हो पाई। वर्ष 2014 में जिनपिंग मोदी के जन्मदिन पर उनके मेहमान बनकर आए, लेकिन लद्दाख में चीनी घुसपैठ का तोहफा दे गए। इसके बाद से दोनों देशों के संबंध लगातार खराब ही होते गए। वास्तव में वर्ष 1951 में तिब्बत पर कब्जे के साथ ही चीन भारत का पड़ोसी बन गया और तबसे ही उच्चस्तरीय द्विपक्षीय वार्ता संबंधों में सुधार का संकेत नहीं रही। मिसाल के तौर पर सीमा विवाद समाधान के लिए नई दिल्ली की बीजिंग के साथ जारी वार्ता की शुरुआत वर्ष 1981 में तब हुई थी, जब भारत की अर्थव्यवस्था चीन के मुकाबले बड़ी थी। अब भारत की अर्थव्यवस्था चीन से पांच गुनी छोटी है और सैन्य शक्ति के मामले में चीन भारत से मीलों आगे है, फिर भी किसी समाधान की दिशा में कोई वास्तविक प्रगति होनी बाकी है। यहां तक कि शी जिनपिंग से मोदी की वार्ता से भी बहुत कुछ हासिल नहीं हुआ, जबकि दोनों नेता 2014 के बाद से ही दुनिया के अलग-अलग स्थानों पर 14 बार मुलाकात कर चुके हैं। मोदी चार बार चीन जा चुके हैं और अगले महीने फिर जाएंगे। वास्तव में वुहान जाना मोदी के लिए बहुत फायदेमंद नहीं रहा।

डोकलाम में चीनी दबाव के आगे मुस्तैदी से डटे रहे मोदी ने चीन को गतिरोध समाप्त करने के लिए परस्पर कदम पीछे खींचने संबंधी समझौता करने पर मजबूर कर दिया था, लेकिन पिछले आठ महीनों के दौरान चीनी सैन्य बल गुपचुप ढंग

से डोकलाम पठार के अधिकांश हिस्से पर काबिज हो गए है। इसके अलावा अगर आर्थिक मोर्चे पर बात करें भारत को चीन के साथ हर महीने पांच अरब डॉलर का व्यापार घाटा भी हो रहा है।

मोदी भारतीय वायुसेना के सबसे बड़े युद्धाभ्यास के बाद ही वुहान गए। इस युद्धाभ्यास का मकसद चीन और उसके साथी पाकिस्तान से संघर्ष की सूरत में दो मोर्चों पर एक साथ निपटने की तैयारी करना था। जहां मोदी यह चाहते होंगे कि चीन के साथ सीमा विवाद कम होने के साथ ही व्यापार संतुलित हो, वहीं शायद जिनपिंग यह मानते हों कि उन्हें मोदी की जितनी जरूरत है, उससे ज्यादा मोदी को उनकी दरकार है। भारत की सुरक्षा और आर्थिक चिंताओं या सीमा पर घुसपैठ में कमी करने जैसे मसलों को दरकिनार करते हुए चीन वुहान के बाद भारतीय बाजार में अपनी पैठ बढ़ाने के साथ यह भी चाहेगा कि भारत उसे चुनौती देना बंद करे। मोदी का यह दौरा चीन के लिए ज्यादा फायदेमंद दिख रहा है।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 03-05-18

An Unhealthy Statement

Privatisation of healthcare, not just doctors, is to blame for corruption in the sector.

SHAH ALAM KHAN, (The writer is professor, Department of Orthopaedics AIIMS, New Delhi)

Prime Minister Narendra Modi recently opened a Pandora's box by condemning the allopathic doctors of the country during an interaction called Bharat ki Baat, Sab ke Saath with the diaspora in London. The PM condemned the Indian doctors on charges of corruption and malpractice. He emphasised on the doctor-industry nexus and shared concerns on the fallout of such a relationship. The Indian Medical Association and other similar outfits have condemned the PM's remarks largely because they were spoken on British soil, a country where nearly 50 per cent of doctors in the National Health System (NHS) happen to be of Indian origin. For me, that is hardly any reason to condemn what Modi said.

Broadly, the PM is not wrong but to believe that his regime (like his political predecessors) hasn't contributed to this decay of medical ethics healthcare in the country is absurd. To analyse the debris of the ethical healthcare delivery system, it is essential to see the complete picture. The decay in the ethics is the result of corporatisation of healthcare by a greedy industry and politicians (remember, a large number of private medical colleges in this country are owned by politicians or their kin). The overall health market in India was estimated to be $100 billion in 2015 and is expected to grow to $280 billion by 2020, at an annual growth rate of nearly 30 per cent. The disturbing aspect of this statistic is the fact that most of this growth is happening in the private healthcare sector. In fact, there has been substantial cost-cutting in public healthcare.

It was the current government which in its first budget in 2014 cut health expenditure by around 20 per cent. In fact, under the present government, we became one of the nations which were spending the least on its health as a percentage of its GDP — less than even Ethiopia and Bhutan. A Lancet report in 2016 mentioned that 80 per cent of India's healthcare is now delivered by the private practitioners, the very doctors whom the PM now condemns as corrupt. The destruction of public healthcare in the country has resulted in this extremely lopsided situation and hence the increasing likelihood of the malpractices

about which the PM spoke in London. This government, like others. however, has contributed to this situation.

The prime minister also mentioned the capping of implant prices under his regime. This is a welcome step but we were told that capping of total knee implants would be followed by capping of prices of the total hip implants, ocular lenses, and many other such items. Nothing has happened in the last eight months in this regard. I hope the government will show haste in capping prices of other implants as well.

To blame the doctors is easy. There is no doubt that significant numbers of doctors are involved in unethical practices. It is also true that doctors and pharmaceutical companies form an unholy alliance. But to paint the entire profession with the same brush country is a matter of serious concern, especially when it comes from the highest quarters. We live in extremely dangerous times where violence against doctors is on the rise. Such imprudent statements coming from the top embolden those who resort to violence. The powers that be should realise that the only effective way to reduce corruption in healthcare is to strengthen the public healthcare delivery system. Corruption is not the handiwork of individuals alone, it is also systemic. Repair the system and the corrupt will melt away like snow under the sun.

Date:03-05-18

Heritage at stake

ASI's record in protecting monuments is nothing to write home about. Corporates can, and should, contribute to conservation.

Editorials

The government's decision to involve the Dalmia Bharat Group in the maintenance of the Red Fort has spawned a much-needed debate on the conservation of historical sites. The move to involve the corporate group in the maintenance one of the country's most iconic monuments is, in itself, a rather limited one, given the scale of the problem heritage conservation presents. The business house will spend Rs 25 crore over the next five years on the fort's upkeep. The money will be used to fund a light and sound show at the fort, and for proving amenities like clean toilets and street furniture.

More significant are the questions that the move has raised. Should private enterprise be involved in preserving heritage? Should the fate of centuries-old relics be left to the Archaeological Survey of India (ASI)? Does the Survey have the expertise, funds, and most importantly, the will for the purpose?

The ASI, a more than 150-year old agency, is officially-responsible for the upkeep of India's 3,600-odd protected monuments. But only in the rare instance does the agency shed its colonial mooring. The deficiency of the ASI's scientific branch have been laid bare in the agency's floundering attempts to stave off the imprints of pollution from the Taj Mahal.

Since 1994, workers have been assiduously applying Fuller's Earth to the tombs and minarets of the mausoleum of Shahjahan's favourite queen in an attempt to provide what can — most charitably — be called cosmetic relief against the grime gnawing away the world's grandest monument to love. The

trouble is that, for the most part, the ASI sees its role as policing entry to monuments and warding of encroachers. It has failed miserably, even at that. In 2013, the Comptroller and Auditor General (CAG) of India reported that more than 90 monuments under the ASI's charge were "missing". Last year, the minister of state for culture and tourism told the Lok Sabha that another 24 monuments "had ceased to exist".

The involvement of corporate groups in conserving heritage monuments should be seen in light of this failure of the ASI. Business houses have been involved in the preservation of historical monuments in other parts of the world. The Agha Khan and the Dorabji Tata Trusts were recently involved in the restoration of the Humayun's Tomb. Such outsourcing should, however, be done with proper monitoring. The ASI took on the overseer's role in the Humayun's Tomb project and according to a 2013 CAG report its handling of the task left much to be desired. The questions then are: Has the agency learnt lessons? Or does heritage conservation require an even more radical paradigm shift?

THE HINDU

Date: 03-05-18

Call to action

WHO highlights the air pollution crisis in urban India; things are no better in rural areas

Editorials

A new report from the World Health Organisation highlights not only how widespread air pollution is in urban India, but also how deficient air quality monitoring is. The report, which summarised 2016 data for 4,300 cities, ranks 14 Indian cities among the 20 most polluted ones globally. While Delhi comes in at number six, Kanpur, Faridabad, Varanasi, Gaya and Patna are ranked ahead of it, by PM 2.5 levels. And yet, Kanpur, Faridabad and several other pollution-choked cities have only one PM 2.5 monitoring station each, while Delhi has several. WHO researchers get around this problem by using alternative data sources such as satellite remote sensing and chemical transport models, along with ground-monitoring stations. The outcome of this exercise makes it clear that air pollution is not a problem of large metropolises alone, even though they have traditionally been the focus of mitigation efforts. Such wide variations in data quality exist across the world.

While Europe has the most extensive monitoring network, countries in Africa and the Western Pacific region perform poorly. This means data from these regions are of poor quality, and likely underestimates, resulting in an under-count of the disease burden as well. The report puts the global death toll from air pollution at seven million a year, attributable to illnesses such as lung cancer, pneumonia and ischemic heart disease. In 2016 alone, it says, around 4.2 million people died owing to outdoor air pollution, while 3.8 million people succumbed to dirty cooking fuels such as wood and cow dung. About a third of these deaths occurred in Southeast Asian countries, which include India. Once monitoring improves in these regions, the numbers will likely be revised upwards.

There are silver linings, however. The report had words of praise for India's Pradhan Mantri Ujjwala Yojana scheme, which has provided 37 million women living below the poverty line with LPG (liquefied petroleum gas) connections. Such schemes will also help cut the indoor air pollution that plagues much of rural India, which is not covered in the WHO analysis. It is important to remember, though, that rural India has problems beyond inefficient cook-stoves. As the recently published draft National Clean Air Programme noted, there are currently no air pollution monitoring stations in rural India. This does not mean outdoor air pollution is not a problem here. Studies have shown that ozone levels are higher in rural areas, as is pollution from insecticide use and crop-burning. The WHO has asked Southeast Asian countries to take swift action to tackle the twin problems of indoor and outdoor pollution. India must realise that its problems are larger than the WHO estimates, and take the call to action seriously.